Dr.Ashish Kumar Kundu
Deptt. Of Philosophy
K.L.S College,
Nawada
Date-17/04/2020
B.A-I
“Satkaryavada. ”

सांख्य के कार्य-कारण सिद्धान्त को **सत्कार्यवाद** के नाम से विभूषित किया जाता है। प्रत्येक कार्य-कारण सिद्धान्त के सम्मुख एक प्रश्न उठता है—क्या कार्य की सत्ता उत्पत्ति के पूर्व उपादान कारण में वर्त्तमान रहती है ? सांख्य का सत्कार्यवाद इस प्रश्न का भावात्मक उत्तर है। सत्कार्यवाद के अनुसार कार्य उत्पत्ति के पूर्व उपादान कारण में अव्यक्त रूप से मौजूद रहता है। यह बात सत्कार्यवाद के शाब्दिक विश्लेषण करने से स्पष्ट हो जाती है। **सत्कार्यवाद** शब्द सत् (existence), कार्य (effect), और वाद (theory) के संयुक्त होने से बना है। इसलिये **सत्कार्यवाद** उस सिद्धान्त का नाम हुआ जो उत्पत्ति के पूर्व कारण में कार्य की सत्ता स्वीकार करता है (Satkaryavada is the theory of the existence of effect in its cause prior to its production)। यदि 'क' को कारण माना जाय और 'ख' को कार्य माना जाय तो सत्कार्यवाद के अनुसार 'ख', 'क' में अव्यक्त रूप से निर्माण के पूर्व अन्तर्भूत होगा। कार्य और कारण में सिर्फ आकार का भेद है। कारण अव्यक्त कार्य (effect concealed) और कार्य अभिव्यक्त कारण (cause revealed) हैं। वस्तु के निर्माण का अर्थ है अव्यक्त कार्य का, जो कारण में निहित है कार्य में पूर्णतः अभिव्यक्त होना। उत्पत्ति का अर्थ अव्यक्त का व्यक्त होना है और इसके विपरीत विनाश का अर्थ व्यक्त का अव्यक्त हो जाना है। दूसरे शब्दों में उत्पत्ति को आविर्भाव (manifestation) और विनाश को तिरोभाव (envelopment) कहा जा सकता है।

न्याय-वैशेषिक का कार्य-कारण सिद्धान्त सांख्य के कार्य-कारण सिद्धान्त का विरोधी है। न्याय-वैशेषिक के कार्य-कारण सिद्धान्त को **असत्कार्यवाद** कहते हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार कार्य की सत्ता उत्पत्ति के पूर्व कारण में विद्यमान नहीं है। असत्कार्यवाद—क्या कार्य उत्पत्ति के पूर्व कारण में विद्यमान है—नामक प्रश्न का अभावात्मक उत्तर है। **असत्कार्यवाद**, अ (Non), सत् (existence), कार्य (effect), वाद (theory) के संयोग से बना है। इसलिये असत्कार्यवाद का अर्थ होगा वह सिद्धान्त जो उत्पत्ति के पूर्व कार्य की सत्ता कारण में अस्वीकार करता है (Asatkaryavada is the theory of the non-existence of the effect in its cause prior to its production)। यदि 'क' को कारण और 'ख' को कार्य माना जाय तो इस सिद्धान्त के अनुसार 'ख' का 'क' में उत्पत्ति के पूर्व अभाव होगा। असत्कार्यवाद के अनुसार कार्य, कारण की नवीन सृष्टि है। **असत्कार्यवाद** को **आरम्भवाद** भी कहा जाता है क्योंकि यह सिद्धान्त कार्य को एक नई वस्तु (आरम्भ) मानता है।

सांख्य सत्कार्यवाद को सिद्ध करने के लिए निम्नलिखित युक्तियों का प्रयोग करता है। इन युक्तियों को सत्कार्यवाद के पक्ष में तर्क (Arguments for Satkaryavada) कहा जाता है। ये तर्क भारतीय-दर्शन में अत्यधिक प्रसिद्ध हैं—

(१) यदि कार्य की सत्ता को कारण में असत् माना जाय तो फिर कारण से कार्य का निर्माण नहीं हो सकता है। जो असत् है उससे सत् का निर्माण असम्भव है। (असदकरणात्) आकाश-कुसुम का आकाश में अभाव है। हजारों व्यक्तियों के प्रयत्न के बावजूद आकाश से कुसुम को निकालना असम्भव है। नमक में चीनी का अभाव है। हम किसी प्रकार भी नमक से चीनी का निर्माण नहीं कर सकते। लाल रंग में पीले रंग का अभाव रहने के कारण हम लाल रंग से पीले रंग का निर्माण नहीं कर सकते। यदि असत् को सत् में लाया जाता तो बन्ध्या-पुत्र की उत्पत्ति भी सम्भव हो जाती। इससे सिद्ध होता है कि कार्य उत्पत्ति के पूर्व कारण में विद्यमान है। यहाँ पर आक्षेप किया जा सकता है कि यदि कार्य कारण में निहित है तो निमित्त-कारण की आवश्यकता क्यों होती है ? इसके उत्तर में कहा जा सकता है कि निमित्त कारण का कार्य सिर्फ उपादान कारण में निहित अव्यक्त कार्य को कार्य में व्यक्त कर देना है। अप्रत्यक्ष कार्य को प्रत्यक्ष रूप प्रदान करना निमित्त-कारण का उद्देश्य है।

(२) साधारणतः ऐसा देखा जाता है कि विशेष कार्य के लिये विशेष कारण की आवश्यकता महसूस होती है। (उपादानग्रहणात्) यह उपादान-नियम है। एक व्यक्ति जो दही का निर्माण करना चाहता है वह दूध की याचना करता है। मिट्टी का घड़ा बनाने के लिये मिट्टी की माँग की जाती है। कपड़े का निर्माण करने के लिये व्यक्ति सूत की खोज करता है। तेल के निर्माण के लिये तेल के बीज को चुना जाता है, कंकड़ को नहीं। इससे प्रमाणित होता है कि कार्य अव्यक्त रूप से कारण में विद्यमान है। यदि ऐसा नहीं होता तो किसी विशेष वस्तु के निर्माण के लिये हम किसी विशेष वस्तु की मांग नहीं करते। एक व्यक्ति जिस चीज से, जिस वस्तु का निर्माण करना चाहता, कर लेता। दही बनाने के लिए दूध की माँग नहीं की जाती। एक व्यक्ति पानी या मिट्टी जिस चीज से चाहता दही का सृजन कर लेता। इससे प्रमाणित होता है कि कार्य अव्यक्त रूप से कारण में मौजूद है।

(३) यदि कार्य की सत्ता को उत्पत्ति के पूर्व कारण में नहीं माना जाय तो कार्य के निर्मित हो जाने पर हमें मानना पड़ेगा कि असत् (Non-existent) से सत् (existent) का निर्माण हुआ। परन्तु ऐसा होना सम्भव नहीं है। जो असत् है उससे सत् का निर्माण कैसे हो सकता है ? शून्य से शून्य का ही निर्माण होता है (out of nothing, nothing comes)। इसलिए यह सिद्ध होता है कि कार्य उत्पत्ति के पूर्व कारण में निहित रहता है। कार्य की सत्ता का हमें अनुभव नहीं होता क्योंकि कार्य अव्यक्त रूप से कारण में अन्तर्भूत है।

(४) प्रत्येक कारण से प्रत्येक कार्य का निर्माण नहीं होता है। केवल शक्त कारण (potent cause) से ही अभीष्ट कार्य (desired effect) की प्राप्ति हो सकती है। शक्त कारण वह है जिसमें एक विशेष कार्य उत्पन्न करने की शक्ति हो। कार्य उसी कारण से निर्मित होता है जो शक्त हो। (शक्तस्य शक्यकरणात्) यदि ऐसा नहीं होता तो कंकड़ से तेल निकलता। इससे सिद्ध होता है कि कार्य अव्यक्त रूप से (शक्त) कारण में अभिव्यक्ति

के पूर्व विद्यमान रहता है। उत्पादन का अर्थ है सम्भाव्य (potential) का वास्तविक (actual) होना।

यह तर्क दूसरे तर्क (उपादान ग्रहणात्) की पुनरावृत्ति नहीं है। उपादान ग्रहणात् में कार्य के लिये कारण की योग्यता पर जोर दिया गया है और इस तर्क अर्थात् शक्तस्य शक्य कारणात् में कार्य की योग्यता की व्याख्या कारण की दृष्टि से हुई है।

(५) यदि कार्य को उत्पत्ति के पूर्व कारण में असत् माना जाय तो उसका कारण से सम्बन्धित होना असम्भव हो जाता है। सम्बन्ध उन्हीं वस्तुओं के बीच हो सकता है जो सत् हों। यदि दो वस्तुओं में एक का अस्तित्व हो और दूसरे का अस्तित्व नहीं हो तो सम्बन्ध कैसे हो सकता है? बन्ध्या-पुत्र का सम्बन्ध किसी देश के राजा से सम्भव नहीं है क्योंकि यहाँ सम्बन्ध के दो पदों में एक बन्ध्या-पुत्र असत् है। कारण और कार्य के बीच सम्बन्ध होता है जिससे यह प्रमाणित होता है कि कार्य उत्पत्ति के पूर्व सूक्ष्म रूप से कारण में अन्तर्भूत है।

(६) कारण और कार्य में अभेद है। (कारणभावात्) (Effect is non-different from cause)। दोनों की अभिन्नता को सिद्ध करने के लिये सांख्य अनेक प्रयास करता है।

यदि कारण और कार्य तत्त्वतः एक दूसरे से भिन्न होते तो उनका संयोग तथा पार्थक्य होता। उदाहरणस्वरूप, नदी वृक्ष से भिन्न है इसलिये दोनों का संयोजन होता है। फिर हिमालय को विन्ध्याचल से पृथक् कर सकते हैं क्योंकि यह विन्ध्याचल से भिन्न है। परन्तु कपड़े का सूतों से जिससे, वह निर्मित है, संयोजन और पृथक्करण असम्भव है।

फिर, परिमाण की दृष्टि से कारण और कार्य समरूप हैं। कारण और कार्य दोनों का वजन समान होता है। लकड़ी का जो वजन होता है वही वजन उससे निर्मित टेबुल का भी होता है। मिट्टी और उससे बना घड़ा वस्तुतः अभिन्न है। अतः जब कारण की सत्ता है तो कार्य की भी सत्ता है। इससे सिद्ध होता है कि कार्य उत्पत्ति के पूर्व कारण में मौजूद रहता है।

सच पूछा जाय तो कारण और कार्य एक ही द्रव्य की दो अवस्थाएँ हैं। द्रव्य की अव्यक्त अवस्था को कारण तथा द्रव्य की व्यक्त अवस्था को कार्य कहा जाता है। इससे सिद्ध होता है कि जब कारण की सत्ता है तब कार्य की सत्ता भी उसमें अन्तर्भूत है।

उपरि-वर्णित भिन्न-भिन्न युक्तियों के आधार पर सांख्य अपने कार्य कारण सिद्धान्त-सत्कार्यवाद का प्रतिपादन करता है। इस सिद्धान्त को भारतीय दर्शन में सांख्य के अतिरिक्त योग, शंकर, रामानुज ने पूर्णतः अपनाया है। भगवद्गीता के "नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः" का भी यही तात्पर्य है। इस प्रकार भगवद्गीता से भी सांख्य के सत्कार्यवाद की पुष्टि हो जाती है।

सत्कार्यवाद के भिन्न-भिन्न तर्कों को जानने के बाद सत्कार्यवाद के प्रकारों पर विचार करना आवश्यक होगा।

सत्कार्यवाद के रूप

(Forms of Satkaryavada)

सत्कार्यवाद के सामने एक प्रश्न उठता है—क्या कार्य कारण का वास्तविक रूपान्तर है? इस प्रश्न के दो उत्तर दिये गये हैं, एक भावात्मक और दूसरा निषेधात्मक। **भावात्मक उत्तर से परिणामवाद** तथा निषेधात्मक उत्तर से **विवर्तवाद** नामक दो सिद्धान्तों का प्रादुर्भाव होता है। इस प्रकार परिणामवाद और विवर्तवाद सत्कार्यवाद के दो रूप हो जाते हैं।

सांख्य, योग, विशिष्टाद्वैत (रामानुज) उपरि-लिखित प्रश्न का भावात्मक उत्तर देकर **परिणामवाद** के समर्थक हो जाते हैं। इन दर्शनों के अनुसार जब कारण से कार्य का निर्माण होता है तो कार्य में कारण का वास्तविक रूपान्तर हो जाता है। कार्य कारण का बदला हुआ रूप है। जब मिट्टी से घड़े का निर्माण होता है तब मिट्टी का पूर्ण परिवर्तन घड़े में होता है। जब दूध से दही का निर्माण होता है तब दूध का परिवर्तन दही के रूप में हो जाता है। परिणामवादियों के अनुसार कार्य कारण का परिणाम होता है। सांख्य के मतानुसार समस्त विश्व प्रकृति का परिवर्तित रूप है। प्रकृति का रूपान्तर संसार की विभिन्न वस्तुओं में होता है। रामानुज के अनुसार समस्त विश्व ब्रह्म का रूपान्तरित रूप है क्योंकि ब्रह्म विश्व का कारण है। चूँकि सांख्य समस्त विश्व को प्रकृति का परिणाम मानता है इसलिए सांख्य के मत को 'प्रकृति परिणामवाद' कहा जाता है। इसके विपरीत रामानुज के मत को 'ब्रह्म परिणामवाद' कहा जाता है क्योंकि वह विश्व को ब्रह्म का परिणाम मानते हैं। **प्रकृति-परिणामवाद** और **ब्रह्म परिणामवाद** परिणामवाद के ही दो रूप हैं। सत्कार्यवाद और परिणामवाद के भिन्न-भिन्न रूपों को एक नामावली में इस प्रकार रखा जा सकता है—

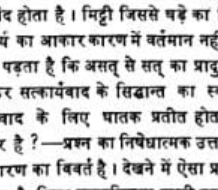

शंकर सत्कार्यवाद को मानने के कारण सत्कार्यवादी हैं। परन्तु परिणामवाद का सिद्धान्त शंकर को मान्य नहीं है। वह परिणामवाद की कटु आलोचना करते हैं। उनके अनुसार कार्य को कारण का परिणाम कहना अनुपयुक्त है। कार्य और कारण में आकार को लेकर भेद होता है। मिट्टी जिससे घड़े का निर्माण होता है, घड़े से आकार को लेकर भिन्न है। कार्य का आकार कारण में वर्तमान नहीं है। इसलिए कार्य के निर्मित हो जाने से यह मानना पड़ता है कि असत् से सत् का प्रादुर्भाव हुआ। इस प्रकार सांख्य परिणामवाद को अपनाकर सत्कार्यवाद के सिद्धान्त का स्वयं खण्डन करता है—सचमुच परिणामवाद सत्कार्यवाद के लिए घातक प्रतीत होता है। शंकर—'क्या कार्य कारण का वास्तविक रूपान्तर है?'—प्रश्न का निषेधात्मक उत्तर देकर विवर्तवाद के प्रवर्तक हो जाते हैं। कार्य कारण का विवर्त है। देखने में ऐसा प्रतीत होता है कि कार्यकारण का वास्तविक रूपान्तर है, किन्तु वास्तविकता दूसरी रहती है। कारण का कार्य में परिवर्तित होना एक आभासमात्र है। इसे एक उदाहरण से समझा जा सकता है। अन्धकार में हम रस्सी को,

कभी-कभी साँप समझ लेते हैं। रस्सी में साँप की प्रतीति होती है, परन्तु इससे रस्सी साँप में परिणित नहीं हो जाती है। मिट्टी से घड़े का निर्माण होता है। घड़ा मिट्टी का वास्तविक रूपान्तर नहीं है यद्यपि ऐसा प्रतीत होता है कि घड़ा मिट्टी का बदला हुआ रूप है। प्रतीति (appearance) वास्तविकता (reality) से भिन्न है। शंकर के अनुसार विश्व का कारण ब्रह्म है। परन्तु ब्रह्म का रूपान्तर विश्व के रूप में नहीं होता है। ब्रह्म सत्य है। विश्व इसके विपरीत असत्य (unreal) है। जो सत्य है, उसका परिवर्तन असत्य में कैसे हो सकता है? ब्रह्म एक है, परन्तु विश्व, इसके विपरीत विविधता अर्थात् अनेकता से परिपूर्ण है। एक ब्रह्म का रूपान्तर नाना रूपात्मक जगत् में कैसे सम्भव हो सकता है? फिर ब्रह्म अपरिवर्तनशील है। किन्तु विश्व परिवर्तनशील है। अपरिवर्तनशील वस्तु का रूपान्तर कैसे सम्भव है? अपरिवर्तनशील ब्रह्म का रूपान्तर परिवर्तनशील विश्व के रूप में मानना भ्रान्तिमूलक है। अतः शंकर ने जगत् को ब्रह्म का विवर्त माना है। शंकर के इस मत को 'ब्रह्म विवर्तवाद' कहा जाता है। उनका सारा दर्शन विवर्तवाद के सिद्धान्त पर आधारित है।

परिणामवाद और विवर्तवाद की व्याख्या हो जाने के बाद अब हम परिणामवाद और विवर्तवाद के बीच की विभिन्नताओं पर विचार करेंगे। परन्तु दोनों की विषमताओं को जानने के पूर्व दोनों के बीच विद्यमान एक समता पर प्रकाश डालना अपेक्षित है।

परिणामवाद और विवर्तवाद दोनों मानते हैं कि कार्य की सत्ता उत्पत्ति के पूर्व कारण में निहित है। कारण और कार्य एक ही वस्तु की दो भिन्न-भिन्न अवस्थाएँ हैं। सत्कार्यवाद के दो रूप—**परिणामवाद और विवर्तवाद**—हैं। इसलिये दोनों को **सत्कार्यवाद** में समाविष्ट किया जाता है। इस एक समता के अतिरिक्त दोनों में अनेक विषमताएँ हैं।

परिणामवाद के अनुसार कार्य कारण का वास्तविक परिवर्तन है। परन्तु विवर्तवाद के अनुसार कार्य कारण का अवास्तविक परिवर्तन है। परिणामवाद दही (कार्य) को दूध (कारण) का वास्तविक परिवर्तन मानता है। परन्तु विवर्तवाद सांप (कार्य) को रस्सी (कारण) का अवास्तविक परिवर्तन मानता है। रस्सी में साँप का आभास होने से रस्सी का परिवर्त्तन साँप में नहीं हो जाता है। इस प्रकार विवर्तवाद और परिणामवाद में प्रथम अन्तर यह है कि **परिणामवाद** वास्तविक परिवर्त्तन (real change) में विश्वास करता है। परन्तु **विवर्तवाद** आभास परिवर्त्तन (apparent change) में विश्वास करता है।

परिणामवाद और विवर्तवाद में दूसरा अन्तर यह है कि परिणामवाद कार्य को कारण का परिणाम मानता है। परन्तु विवर्तवाद कार्य को कारण का विवर्त (appearance) मानता है। दूध से दही का निर्मित होना परिणामवाद का उदाहरण है और रस्सी में साँप की प्रतीति होना विवर्तवाद का उदाहरण है। परिणामवाद के अनुसार कार्य कारण का रूपान्तरित रूप है। परन्तु विवर्तवाद इसके विपरीत कार्य को कारण का रूपान्तरित रूप नहीं मानता है। हमें ऐसा प्रतीत होता है कि कार्य कारण का रूपान्तर है परन्तु प्रतीति को वास्तविकता कहना भूल है।

परिणामवाद और विवर्तवाद में तीसरी विभिन्नता यह है कि परिणामवाद कारण और कार्य दोनों को सत्य मानता है, परन्तु विवर्तवाद सिर्फ कारण को सत्य मानता है। परिणामवाद के अनुसार कार्य कारण का यथार्थ रूपान्तर है। मिट्टी से बना घड़ा मिट्टी का वास्तविक रूपान्तर है। जिस प्रकार मिट्टी वास्तविक है उसी प्रकार घड़ा भी वास्तविक है। अतः परिणामवाद के अनुसार कार्य और कारण दोनों सत्य हैं। परन्तु विवर्तवाद में कार्य और कारण दोनों को सत्य नहीं माना जाता है। कार्य कारण का आभास-मात्र है। उदाहरण के लिये कहा जा सकता है कि अंधकार में हम रस्सी को साँप समझ लेते हैं। रस्सी कारण है, साँप कार्य है। रस्सी यथार्थ है परन्तु साँप अयथार्थ है। विवर्तवाद के समर्थक शंकर ने ब्रह्म को सत्य माना है क्योंकि वह विश्व का कारण है। विश्व को, जो कार्य है, असत्य माना गया है। इससे सिद्ध होता है कि विवर्तवाद में सिर्फ कारण को सत्य माना गया है, कार्य को पूर्णतः असत्य माना गया है।